हिंदी की समसामयिक ई – पत्रिका

अकस्मात

संपादक : अशोक आत्रेय

सत्यमेव जयते ! सूली पर संविधान !!

हमें यह भी देखना चाहिए कि सत्य के साथ शिव व सुन्दर भी है। सत्य कहीं भी अकेला नहीं है। चाहे वह सर्वोच्च हो।

संपादकीय

किसी अदृष्य चौथी दुनिया की ओर....

संसद पक्ष व विपक्ष दोनों का मंच है। यह भी सच है कि निर्णय आवश्यक बहुमत से ही होता है। सरकार भी इसी सिद्धांत पर बनती है और टिकी रहती है। निर्धारित अवधि के बाद चुनाव होता है और हमारे देश में इस तरह कार्यपालिका न्यायपालिका व संसदीय गरिमा व संविधान व लोकतंत्र की सुरक्षा होती है। यह भी सही है कि कानून बनने में राष्ट्रपति का अनुमोदन जरूरी है। इसमें सर्वोच्च न्यायालय कहीं आडे नहीं आता। राष्ट्रपति अगर चाहे तो संसद में पारित बिल या विधेयक को संसद के पास पुनर्विचार के लिए प्रेषित कर सकता है लेकिन अगर उसके बाद भी बिल राष्ट्रपति के पास जाता है तो राष्ट्रपति उस पर अपनी मुहर लगा देता है। इस सारी प्रक्रिया में सर्वोच्च न्यायालय का कोई दखल नहीं होता। सर्वोच्च न्यायालय केवल उन मामलों पर दखल देता है जो मामले संवैधानिक मामलों में दखल या विचार के अन्तर्गत आते हैं। यह परिस्थिति संसद व राष्ट्रपति के बीच आए किसी विवाद के कारण या न्यायपालिका या कार्यपालिका के दुराचरण या मिस इंटर प्रिटेशन या ना समझी या किसी चूक से भी हो सकती है। इस सबके बावजूद संविधान कोरी किताब नहीं होता उसमें संसोधन होते रहते हैं। यह कम आश्चर्य की बात नहीं कि पंडित जवाहर लाल नेहरू, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, वी पी सिंह, अटल बिहारी वाजपेयी, नरेन्द्र मोदी आदि के कार्यकाल में संविधान में अनेक संशोधन हुए। इंदिरा गांधी ने तो भारतीय संविधान के मूल अधिकारों में समाजवाद की अवधारणा जोडकर मौलिक परिवर्तन तक कर डाला। यह सारी बातें व्यापक विचार विमर्श आन्दोलन व राष्ट्रीय स्तर पर लोकतंत्रीय मर्यादा के रहते हुए किए गये। जब कभी तानाशाही या आपातकाल का दौर आया तो उसे भारतीय जन मानस ने व्यापक जनमत से उखाडकर फेंक दिया। आइए हम देखते हैं देश में संसद में बहुमत से पारित व राष्ट्रपति से अनुमोदित अल्प संख्यक सुधार कानून का भविष्य क्या होता है। अभी यह संसद न्यायपालिका व कार्यपालिका के बीच किसी अदृश्य चौथी शक्ति के अधीन किसी बडे क्रांतिकारी बदलाव की दिशा में सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन है।

सत्यमेव जयते!

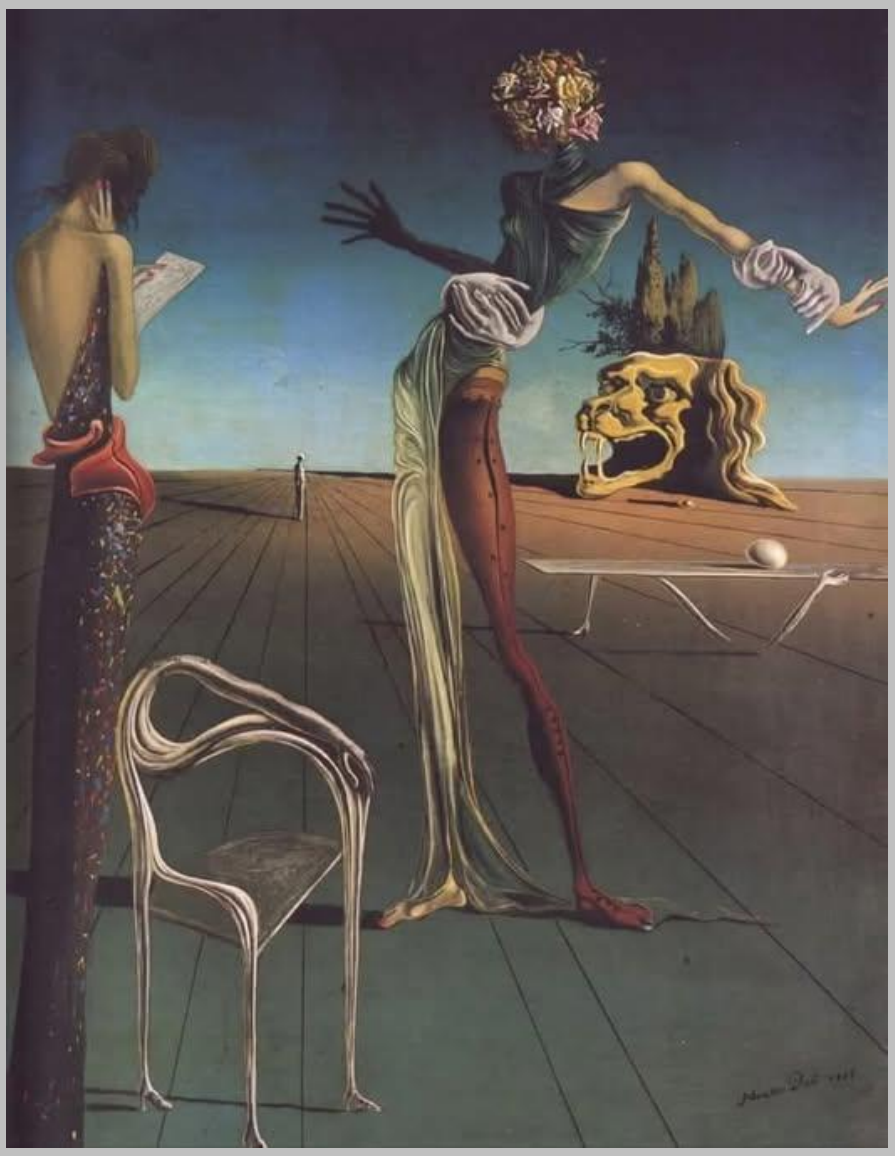

संसद व राष्ट्रपति के अनुमोदन के बाद बने कानून को चुनौती देना अराजकता को जन्म देता है। इससे संसदीय लोकतंत्र खतरे में पड सकता है।

सुप्रीम कोर्ट भारत के संविधान की सुरक्षा की सर्वोच्च संस्था है लेकिन इसे राष्ट्रपति या संसदीय संस्थाओं से पारित कानून पर पुनर्विचार नहीं करना चाहिए। इस तरह के हस्तक्षेप से देश में दो तरह की निर्णायक संस्थाएं बनना देश के संविधान में विरोधाभास की स्थिति पैदा करता है। अगर एक ही मामले पर दो अलग अलग फैसले किए जाएंगे या यह विकल्प रखा जाएगा तो देश में लोकतंत्र खंडित होगा। इसी विरोधाभास के कारण ही भारत का कोई भी राज्य या मुख्यमंत्री अपने बहुमत के आधार पर केन्द्र द्वारा पारित व राष्ट्रपति द्वारा अनुमोदित कानून को नहीं मानकर या इसके विरूद्ध आचरण करके देश में अराजकता की स्थिति पैदा कर सकता है। जो हमें आज अल्प संख्यक वक्फ संशोधन कानून को नहीं मानने और उसका मखौल उडाने की दृष्टता या खुल्लमखुल्ला विरोध कर सकता है जो आज प बंगाल और मुख्यमंत्री ममता बनर्जी की भूमिका से साफ हो जाता है। प बंगाल भारत के दूसरे राज्यों की तरह ही एक राज्य है उसके मुख्यमंत्री को केन्द्र व राष्ट्रपति के फैसले के विरोध का कोई अधिकार नहीं है। इसी तरह से सुप्रीम कोर्ट की ऐसी विवादास्पद भूमिका हमारे संविधान को और इसके प्रमुख निर्माणकर्ताओं को हास्यास्पद बनाती है।

वाद – विवाद संवाद

भारत के राष्ट्रपति को 'घेरने' के आधार क्या ?

अनुच्छेद 142 लोकतांत्रिक ताकतों के खिलाफ एक परमाणु मिसाइल बन गया है

आज सुप्रीम कोर्ट की ओर से राष्ट्रपति और राज्यपालों को बिलों को मंजूरी देने की समय सीमा तय किये जाने पर विभिन्न क्षेत्रो में सवाल खड़े किये जा रहे है. जिस तरह से आज अदालतें भारत के संवेधानिक पर्भुत्व चुनोती देती नजर आती है. संविधान का अनुच्छेद 142 के तहत मिले कोर्ट को विशेष अधिकार लोकतांत्रिक शक्तियों के खिलाफ 24x7 उपलब्ध #न्यूक्लियर_मिसाइल बन गया है. अनुच्छेद 142 के तहत भारत का सुप्रीम कोर्ट पूर्ण न्याय करने के लिए कोई भी आदेश, निर्देश या फैसला दे सकता है, चाहे वह किसी भी मामले में हो. भारत ने ऐसे लोकतंत्र की कल्पना नहीं की थी, जहां जज कानून बनाएंगे, कार्यपालिका का काम स्वयं संभालेंगे और एक सुपर संसद के रूप में कार्य करेंगे. इन दिनों न्यायपालिका का हस्तक्षेप एक अत्यंत गंभीर मुद्दा बन चुका है.

संविधान के तहत एकमात्र अधिकार अनुच्छेद 145(3) के तहत संविधान की व्याख्या करना है। वहां, पांच या उससे अधिक न्यायाधीश होने चाहिए। जब अनुच्छेद 145(3) था, तब सुप्रीम कोर्ट में न्यायाधीशों की संख्या आठ थी, यानी 8 में से 5, अब 30 में से 5 और विषम है। न्यायाधीशों का यह समूह अनुच्छेद 145(3) के तहत किसी मामले से कैसे निपट सकता है, यदि इसे संरक्षित किया गया था, तो यह आठ में से पांच के लिए था। हमें अब इसके लिए भी संशोधन करने की जरूरत है। आठ में से पांच का मतलब है कि व्याख्या बहुमत से होगी। खैर, पांच का मतलब आठ में से बहुमत से ज़्यादा है। लेकिन इसे एक तरफ़ रखिए। अनुच्छेद 142 लोकतांत्रिक ताकतों के खिलाफ एक परमाणु मिसाइल बन गया है, जो न्यायपालिका के लिए चौबीसों घंटे उपलब्ध है..."

प्रासंगिक....

इतिहास हमें आईना भी दिखाता है

अरविन्द "कुमारसंभव"

अक्सर मीडिया, भाजपाईयों में और जन सामान्य में यह चर्चा होती है कि भारत में हिन्दुओं का दमन हो रहा है, हिन्दू कुछ क्षेत्र विशेष से पलायन कर रहे हैं, दंगों में शिकार बन रहे हैं। इन बातों में कुछ सच्चाई भी हो सकती है और कुछ अतिशयोक्ति भी।

यदि हम निष्पक्ष होकर और साहस दिखाते हुए इस पर विचार और अन्वेषण करें तो एक सच्चाई यह निकल कर आती है कि चंद्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) के बाद से ही या और कुछ पीछे जायें तो महाभारत युद्ध के बाद से ही हिन्दुओं में पराक्रम, साहस, कूटनीति, सैन्य नीति, आत्म-अभिमान और आत्मविश्वास का अभाव दिखना आरम्भ हो चुका था जो सदियां बीत जाने के बाद हमारे डीएनए में भी प्रवेश कर गया था। विशेषकर उत्तरा पथ या आर्यावर्त के हिन्दुओं में। यह तब और स्पष्टता से दिखाई दिया जब एक के बाद एक यवन, शक, कुषाण, हूण, मुस्लिम और अंग्रेज आदि ब्रीड बड़ी आसानी से भारत में घुस कर हमारे शासकों को पराजित करती रहीं और राज करती रहीं। और हमारी उपलब्धि क्या रही? जौहर, साका, आत्मबलिदान और पराजय। हम इन्हें ही अपना गरूर मानकर आज तक अपने रोंये खड़े करते रहे हैं और किताबों में गुणगान करते रहे हैं। राजा पौरस, दाहिर से लेकर पृथ्वीराज चौहान, हेमू, सांगा, प्रताप, संभाजी, पेशवा, रानी झांसी आदि का अंत बहादुरी से लड़ते हुए पराजय से ही तो हुआ। कभी सुना किसी हिंदू राजा की विदेशी आक्रांता के विरुद्ध बहादुरी से लड़ते हुए जीत हुई हो। और हमारे राजपुताना के राजा आपस में राजकुमारियों को ब्याह के लाने के मुद्दे पर ही आपस में कट मरते रहे। एक राणा प्रताप को छोड़ दो तो सभी राजपूत राजा मुगलों से मनसबदारी प्राप्त करने में और गोड सेव दी किंग गाने में ही व्यस्त रहे। स्वयं राणा सांगा कभी इब्राहिम लोदी और कभी बाबर से संबंध रखने में ही उलझ कर आखिरकार लड़ मरे। राणा हम्मीर और बप्पा रावल जैसे परमवीर योद्धा भी आखिर में अपना गढ़ नहीं बचा पाये। मुगल बादशाहों की तर्ज़ पर ये राजपूत और सिख राजा भी तो पत्नियों, उपपत्नियों, पड़दायतों

का जखीरा रखने लगे। मुगलों के हरम हुआ करते थे और इनके रनिवास और रावले। एक सिख राजा भूपेंद्र सिंह ने तो पत्नी रखने का विश्व रिकॉर्ड ही बना डाला था।

और हमारी जनता? यथा राजा तथा प्रजा। कभी विदेशी आक्रांताओं और विदेशी धर्म के ख़िलाफ़ कोई विद्रोह नहीं। जरा बादशाही नौकरों ने सख़्ती करी, जकात लगाया या धन का/ नौकरी का लालच दिया, फौरन धर्म बदल लिया। अशोक से लेकर इस्लामिक और ईसाई शासकों तक जनता बादशाहों के पीछे चलकर धर्म बदलती रही। आखिर जहां जिस विशाल भारतीय भूभाग में शत-प्रतिशत हिन्दू रहते थे वहां आज तीस प्रतिशत अन्य धर्म वाले कहां से आ गये? वो यहीं के हैं और अपनी कमजोरी तथा लालच के कारण विधर्मी बन गये। और जो अब सत्तर प्रतिशत हिन्दू हैं उनके डीएनए में भी पराजय, डर और पलायन घुस चुका है। वे बयानवीर और कलम वीर तो हैं किन्तु सड़क वीर नहीं । वे अपनी रक्षा और अपने संरक्षण के लिए सरकार की तरफ़ देखते हैं और सरकारों को कोसते हैं। वे डीजे बजा कर बड़े बड़े जुलूस निकाल लेंगे, पदयात्रा करेंगे किंतु उस दौरान एक पत्थर कहीं से आ गिरे तो गिरते पड़ते भागने में ही भलाई समझेंगे बगैर सही तथ्य जाने और आवश्यकता पड़ने पर आवश्यक आत्मरक्षार्थ प्रतिरोध करने के। हम अपने पुराने मौहल्ले को छोड़ते समय अधिक कीमत के लालच में किसी अन्य को अपना पैतृक मकान बेच देंगे किंतु थोड़े कम में अपने किसी सहधर्मी को नहीं देंगे। आप लोगों के घरों में बंदर भगाने तक को डंडा नहीं मिलता क्योंकि अशोक और गांधी ने आपके डीएनए में अहिंसा का तत्व घुसा कर आपको जरूरत से ज्यादा कायर और निष्क्रिय बना दिया है। सबकुछ भगवान और सरकार के भरोसे छोड़ रखा है आपने। कानून, लोकतंत्र, संविधान आपके लिए भी तो हैं। वैद आत्मरक्षा के अधिकार को तो ये भी स्वीकार करते हैं।

सैंतालीस के बाद युद्ध में भी हमने अपनी परंपरागत राजनैतिक भीरुता के चलते दो तिहाई कश्मीर को पाकिस्तान चीन के हाथ खोया और लद्दाख अक्साई चिन क्षेत्र में चीन से शिकस्त खाई। पैंसठ के युद्ध में हम मेज़ पर हारे और इकहत्तर के युद्ध में भी पाकिस्तान मेज पर वार्ता करके बगैर कुछ दिये अपने छियानवे हजार सैनिक युद्ध बंदी छुड़ा कर ले गया। अभी डेपचान घाटी में चीन ने हमारी इसी राजनैतिक भीरुता के चलते हमारी सैन्य गश्तों को जबरन रोक दिया।

तो हम हिन्दू चीख-पुकार, गिले शिकवे करने की जगह अपने डीएनए में संशोधन करें और वही चंद्रगुप्त मौर्य, समुद्रगुप्त, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य, ललितादित्य मुक्तापीड, राणा प्रताप जैसा साहसी रक्त अपनी शिराओं में पुनः प्रवाहित करें।

दुश्मन आपका बाहर कोई नहीं है। दुश्मन तो आपके अंदर बैठा है और वह है डर, निकम्मापन और हताशा। आप सोशल मीडिया पर विधर्मियों को गाली देने और कोसने में चैम्पियन हो सकते हैं किंतु अपने अंदर के खोखलेपन को झांक कर देखने और महसूस करने में आपको शर्म आती है।

आपको किसी अन्य धर्म से खतरा नहीं है। वे तो अपने धर्म की बतायी मूल लकीर पर पूर्ण प्रतिबद्धता से चल रहे हैं। उनके धर्म का मूल ही अन्य धर्मों से नफ़रत करना और उन्हें मिटाना है। वे तो स्वयं अपने अंदर के शियाओं और अहमदियों को बर्दाश्त नहीं करते हैं । उस विचारधारा से तो भारत निबट लेने में सक्षम था और रहेगा। उसकी चिंता छोड़ें। खतरा आपको अपने आप से है। धर्म के प्रति आपकी सच्ची प्रतिबद्धता में कमी के कारण आप खतरे में हैं।

आज कुछ विशेषाधिकार प्राप्त कुछ लोग अपने राजनैतिक आकाओं के इशारे पर शंकराचार्यों को भी गाली देते हो। वेद पुराणों, स्मृतियों की बड़े आराम से निन्दा करते भी है और सुनते भी है। एक दूसरे की जाति का अपमान करते हो , मंदिरों एवं तीर्थस्थलों की प्राचीन परंपराओं को नष्ट-भ्रष्ट करते हो, पवित्र नदियों में गंदगी प्रवाहित करते हो, अपनी धार्मिक परंपराओं से अपने बच्चों को अवगत कराने को पिछड़ापन की निशानी मानते हो तो खतरा तो आप स्वयं बने हुए हो अपने धर्म के लिए। दूसरे को क्यों दोषी बताते हो?

कभी कभी आईना भी देख लेना चाहिए। आईना बड़ा निष्ठुर होता है। और आईना एक शिक्षक भी होता है।

क्या ईश्वर फिर एक दिन अकेला हो जाएगा?

अगर हम अपने तथाकथित धर्म- संस्कृति के ठेकेदारों , पुरातत्व व इतिहास वेत्ताओं पर पल भर के लिए भरोसा भी कर लें तब भी हमारे सामने अपने इतिहास और संस्कृति को लेकर सैकड़ों सवाल खड़े हो जायेंगे क्योंकि हमारा समग्र विश्व- इतिहास विवादों और विरोधाभासों व दुरभिसंधियों से पूरी तरह से भरा पड़ा है.

शुरूआत बहुत दूर से क्यों करें ? सेंगोल से ही करलें .

क्या यह सुनिश्चित हैं कि एक लोकतंत्र के रूप में हमारा देश धर्म- संस्कृति के नये अवतार सेंगोल से संतुष्ट है? सत्ता की राजनीति का यह नया प्रतीक चाचा नेहरू की तथाकथित चलने वाली (वाकिंग स्टिक) छड़ी कब बन गयी खुदा जाने लेकिन यह सत्य है कि इसे इसे लॉर्ड माउंट बैटन ने सत्ता के हस्तांतरण के संकेत रूप में हमारे पहले पीएम को सौंपा था . क्या हमें यकीन है कि उस विस्मृत और लगभग भुला दी गयी परम्परा को हमारी विभाजित मानसिकता वाली संसद नए संसद भवन में नियंत्रण के एक और मौन बटन के रूप में सेंगोल को स्वीकार करने के लिए तैयार है..यह एक ऐसा सवाल है..जिसका जवाब हमारी पूरी संसद ने दिल

से नहीं दिया है बल्कि इसे भारतीय लोकतंत्र को राजशाही की ओर धकेलने का खुला खेल शुरू कर दिया है.

एक बड़ा सवाल?

हमारे कई तथाकथित इतिहासकार और क्यूरेटर केवल संकलनकर्ता और कॉपी मास्टर हैं और उनमें थोड़ी गहराई तक जाने और वस्तुस्थिति के आंतरिक मूल्य की व्याख्या करने की रचनात्मकता या अंतर्दृष्टि की कमी है। यह समझ हमारी विरासत को मौन और निष्क्रिय बना देती है..बल्कि प्रभावहीन और स्थिर व पंगु भी बना सकती है.बल्कि आज इस मिथ्याभासी समय में हमें संस्कृति कला और अन्य रचनात्मक क्षेत्रों के क्षेत्र में नई प्रतिभाओं विचारकों व स्वतंत्र संस्कृति कर्मियों और शोधकर्ताओं की आवश्यकता है जो हमारे संवैधानिक व संसदीय मूल्यों का समुचित संरक्षण कर सकें .

हम अब केवल रखरखाव व औपचारिक क्यूरेशन से बहुत आगे आचुके हैं और रचनात्मकता क्रियाशीलता (जनरेशन) की ओर बढ़ रहे हैं। अगर हम इसे एक दिन नहीं समझ पाए तो हमारी अमर्यादित राजनीति और पार्टीबद्ध नौकरशाही और उनसे जुडी बाजारू आईटी कम्पनियां, कंप्यूटर की संस्कृति हमारी सभी मानवीय संभावनाओं व सांस्कृतिक धरोहर को हमसे छीन लेगी और हमारे चारों ओर एक बड़ी खाली जगह होगी...कोई मानव इस दृश्य की गवाही देने के लिए भी संम्भवत: उपस्थित नहीं होगा। लेकिन जो दृश्य हमारे सामने होगा वह किसी भी स्तर पर बर्दास्त बाहर होगा. संसदीय प्याले में आज जो तूफ़ान आता हमें नजर आरहा है उसका सेंगोल प्रकरण एक सांकेतिक शुरूआत हो सकता है जिसका अनुचित लाभ विरोधी पार्टियां लेने को कटिबद्ध लगती हैं.

ईश्वर फिर अकेला हो जाएगा... एक दिन !

हम कहां जा रहे हैं ?

क्या वह कोई मानव रहित दुनिया है ? या केवल नासमझों की भीड़ . कठपुतलियाँ . हमारी कृत्रिम समझ (AI) तो यह सुनिश्चित कर चुकी है । बल्कि वह इसके लिए पूरी तरह से तैयार है कि अब हम नहीं हमारी जगह हर काम के लिए मशीन ही काम करेगी। और यह काम अब ऊपर से नीचे तक केवल मशीन के ही हवाले होगा। इस दिशा में सुपर कंप्यूटर की गति व समाधान की सारी प्रक्रिया मानव रहित होती जा रही है।

लेकिन यहां सबसे बडा सवाल आता है कि लियोनार्डो द विंसी की मोनालिसा और किशनगढ के महाराजा नागरीदास जी की बणीठणी में सुन्दर कौन है ? बीकानेर के भुजिया या इटली के पिज्जा में अधिक स्वादिष्ट कौन ? ताजमहल और एफिल टावर में से दुनिया का बडा आश्चर्य कौन सा है। महाराणा प्रताप और अकबर में महान कौन ? सेंगोल या नेहरू की वाकिंग स्टिक का सही सच क्या ? निश्चित रूप से जो भी सूचना कंप्यूटर के पास होगी उससे कहने को इसका जवाब भी मिल जाएगा लेकिन यह जवाब यांत्रिक होगा । जरूरी नहीं है कि वह सारी मानवता के लिए मान्य भी हो। इधर कृत्रिम समझ को सर्वोपरि मानने वाली सत्ता यह सब इस आधार पर तय करने जा रही है कि सारी मानवता का सोचने का आधार एक ही जैसा है। कंप्यूटर मानव शरीर उसकी चेतना के सभी अवयवों का अनुसंधान मानव मन से अधिक गति से व प्रमाण से कर सकता है। बल्कि यहां तो मानव मस्तिष्क को ही दर किनार करके कला धर्म विग्यान उद्योग युद्ध यहां तक की सैक्स जैसी जटिल बातों के भी सभी समाधान कंप्यूटर के पास आ रहे हैं। इसमें अब जनरेशन की संभावनाएं बढ गयी हैं जो मानव मन से आगे हैं।

तो यह रही हमारे भारतीय वेदांत दर्शन की बात जहां सब कुछ मानव बुद्धि या भावनाओं से आगे और परे है। क्या यही निष्कर्ष है AI या कृत्रिम समझ का ?

आप भी विचार करें ?

लेकिन विचार(?) हीन होकर ही। यह सब तो कंप्यूटर कर रहा है। क्वांटम कंप्यूटर तो सुपर कंप्यूटर से आगे है ।क्या भावी दुनिया मानव रहित होगी। या बस इस सारे ब्रह्मांड में एकदिन इसका निर्माता ईश्वर(अगर वह है) फिर से अकेला हो जाएगा। इन सब मायावी खिलौनों से खेलने के लिए?

लोमष ऋषि

विशेष चर्चा

सलाम लोकतंत्र – 1

किस- किस को दण्डित करेगा संविधान?

28 मई वर्ष 2023 को एक शुभ मुहूर्त पर लोकतंत्र के करीब 900 करोड़ रुपए से निर्मित नए मंदिर (संसद भवन) में अनेक प्रमुख विपक्षी दलों के विरोध के मध्य राजतंत्र के प्राचीनतम प्रतीक सैंगोल (राजदण्ड) को समारोह पूर्वक स्थापित कर दिया गया। वैसे देखा जाए तो आजादी के अमृत महोत्सव के उपहार के रूप में सैंगोल की स्थापना लोकतंत्र द्वारा राजतंत्र को गले लगाने के जश्न की शुरुआत जैसी लग रही थी।

सैंगोल संस्कृत के 'संकु' शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है 'शंख'। प्राचीन काल में सत्ता हस्तांतरण के दौरान इसे एक शासक दूसरे शासक को विधिवत सौंपता था। एक तरह से यह नए शासन की स्थापना का शंखनाद भी होता था। तमिल भाषा में एक शब्द है 'सिम्मई' , जिसका अर्थ होता है 'समृद्धि से भरपूर'। कहा जाता है 'सैंगोल' का इससे भी कोई संबंध है। आज मौजूद 'सैंगोल' करीब 5 फीट लंबा चांदी का एक राजदंड है। उसके ऊपरी सिरे पर नंदी की प्रतिमा बनी हुई है। दंड पर सोने की परत चढ़ी है। कहा जाता है अंतिम ब्रिटिश वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन के कहने पर तमिलनाडु के मठ तिरु वदुवुराई अधीनम ने मद्रास के जौहरी श्री बुम्मी दी बंगारू चेट्टी से इसे बनवाया था। उस समय इसकी लागत करीब पंद्रह सौ रुपया आई थी।

इतिहास बताता है कि मिस्र, रोम और जारशाही वाले राजतंत्र में निरंकुश शासन के प्रतीक के रूप में इसका प्रयोग किया जाता था। हमारे यहां भी आठवीं सदी में चोल साम्राज्य में सत्ता हस्तांतरण के दौरान इसका प्रचलन शुरू हुआ और वह 13 वी सदी तक चलता रहा। बाद में इसका उपयोग बंद हो गया।

वर्ष 1947 में लॉर्ड माउंटबेटन ने प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू से जब पूछा कि सत्ता हस्तांतरण के प्रतीक के रूप में क्या लेना चाहेंगे तो नेहरु जी ने उत्तर देने के लिए समय मांगा था। इस विषय पर मनोनीत प्रथम गवर्नर जनरल श्री सी राजगोपालाचारी से उन्होंने सलाह ली। श्री राजगोपालाचारी ने उन्हें तमिलनाडु की राजशाही में सैंगोल के प्रचलन के बारे में बताया। नेहरू जी ने माउंटबेटन को इसकी जानकारी दी और माउंटबेटन ने सैंगोल बनवा लिया। इतना ही नहीं बगैर किसी बड़े धूम-धड़ाके के उन्होंने इसे नेहरू जी को सौंप भी दिया। नेहरू जी को लोकतंत्र में राजतंत्र के इस प्रतीक की कोई उपयोगिता नजर नहीं आई। उनका मानना था कि जनता अपने मतों से शासन के अधिकार सौंपती रहेगी। इसलिए एक शासक द्वारा दूसरे शासक को इस राजदंड के सौंपने का कोई महत्व नहीं है। यह सोचकर उन्होंने इसे इलाहाबाद के संग्रहालय में रखवा दिया। संयोगवश वर्ष 1978 में कांची मठ के महा पेरियवा ने इसके बारे में अपने एक शिष्य को बताया। बाद में श्री बी आर सुब्रमण्यम ने अपनी किताब में इसका जिक्र कर दिया।

कदाचित राजनीतिक लाभ उठाने के इरादे से आजादी के अमृत महोत्सव की श्रृंखला का एक भाग बनाते हुए संसद के नए भवन में उद्घाटन के अवसर पर प्रधानमंत्री ने शासकों को निष्पक्ष और न्याय पूर्ण शासन की प्रेरणा देने वाले प्रतीक के रूप में इसे वहां विधिवत स्थापित कर दिया। शायद उन्हें लगा होगा कि इसका बने रहना जरूरी है, क्योंकि शासक प्रायः निष्पक्षता और न्याय को सत्ता हासिल करने के बाद भूल ही जाते हैं। संपूर्ण आयोजन का संचालन और क्रियान्वयन राष्ट्र प्रमुख द्वारा के किए जाने की बजाय सत्ता दल के प्रधानमंत्री के कर कमलों से संपन्न होना विपक्षी दलों को रास नहीं आया और उन्होंने ना केवल इसका पुरजोर विरोध किया बल्कि समारोह में अनुपस्थित होकर उसका बहिष्कार भी किया। करीब 20 प्रमुख विरोधी दलों ने ऐसा किया।

अनुपस्थित सदस्यों की संख्या लोकसभा के कुल सदस्य संख्या का 26% और राज्यसभा का 38% रहा। सत्ता दल इसे विरोधी दलों के दिमागी दिवालियापन का प्रतीक बता रहा है, वहीं विपक्षी इसे लोकतांत्रिक लोकाचार के विरुद्ध और संवैधानिक मूल्यों का अपमान बताकर संसद से लोकतंत्र की आत्मा का निष्कासन सिद्ध करने पर तुला है। अब यह तो भविष्य के गर्त में छुपा है कि 'सैंगोल' आगे जाकर क्या गुल खिलाएगा और किस-किस को दंडित करेगा।

जब भी हम सेंगोल की बात करते हैं लोग इतिहास के पन्ने खंगालने लग जाते हैं। क्या करें संसद की नई इमारत में इसकी स्थापना ने इस जिन्न को दुबारा जीवित जो कर दिया है।अब वे लोग भी जो कभी हमारी संस्कृति, सभ्यता और परम्पराओं के आंगन में पांव रखने से परहेज़ करते थे विशेषज्ञ बन कर अपना ज्ञान परोस रहे हैं। कुछ तो प्रधानमंत्री जी को ये सलाह देने से भी नहीं चूके कि उन्हें वहां पुराने की जगह नया सेंगोल बनवा कर स्थापित करना चाहिए था। कदाचित उनकी मंशा थी कि इसी बहाने वे उसमें भाजपा का कोई चिन्ह ही मंडवा लेंगे।अगर ऐसा हो जाता तो उनके हाथ आया , नेहरू जी का मखौल उड़ाने का मौका जरूर वे गंवा देते। इनमें से कई तो इस हद तक निश्चित थे गोया उन्होंने नेहरू जी को संसद के गलियारों में उस प्राचीन सेंगोल को वाकिंग स्टिक की तरह इस्तेमाल करते हुए देखा हो।उनके मतानुसार ऐतिहासिक सेंगोल को किसी संग्रहालय में रखना घोर अपराध की श्रेणी में आता है।

खैर,आपकी जानकारी के लिए बता दें कि सेंगोल खोजने के लिए आपको इतिहास की कंदराओं में भटकने की जरूरत नहीं है। हमारे बुजुर्ग आज भी इसका बाकायदा इस्तेमाल कर रहे हैं और पुरजोर कर रहे हैं। उन्होंने इसका नाम बेशक वाकिंग स्टिक रख दिया है पर काम वही अनुशासन बनाए रखने का है। शैतान और अनुशासन के दायरे से बाहर निकल रहे बच्चों को सबक सिखाने के लिए अध्यापकों के पास पहले सेंगोल ही हुआ करता था।

सेंगोल के जिन्न को वापस किसी चिराग में बंद कर पाना असंभव नहीं तो मुश्किल तो है ही।

सलाम लोकतंत्र – 2

सत्ता हस्तांतरण बनाम वाकिंग स्टिक

आजाद भारत की संसदीय परंपरा में एक नये इतिहास को जोडने वाले एक स्वर्ण खचित राजदंड सेंगोल ने 28 मई 2023 को भारत के नए संसद भवन में एक नयी क्रांति का सूत्रपात कर दिया इसका इतिहास चोल साम्राज्य से जुड़ा है। सेंगोल जिसे हस्तान्तरित किया जाता है, उससे न्यायपूर्ण शासन की अपेक्षा की जाती है।

ऐसा दावा है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात तत्कालीन वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन ने भारत गणराज्य के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को इसे सौंप दिया था। बाद में इसे इलाहाबाद संग्रहालय में रख दिया गया था। सेंगोल सोने और चांदी से बना है।

सेंगोल शब्द संस्कृत के संकु (शंख) से लिया गया है। यह तमिल शब्द सेम्मई एवं कोल से मिलकर बना है। शंख को सनातन धर्म में बहुत पवित्र कहा जाता है।

तमिलनाडु के तंजावुर में सेंगोल को अच्छे शासक का प्रतीक के रूप में माना जाता है। पहले तमिल राजाओं के पास सेंगोल रखे जाते थे।

सेंगोल की जो बनावट है उसका जो बाहरी परत है वह सोने का बना हुआ राजदंड है। इसकी लम्बाई करीबन 1.5 मीटर है।

इसका जो मुख्य हिस्सा होता है वह चाँदी का बना होता है।

सेंगोल का निर्माण किया जाता है तो इसके बनने में 800 ग्राम का दोना लगाया जाता है। इसकी जो नक्कासी देखने को मिलेगी वह बहुत ही शानदार है।

सेंगोल का जो शीर्ष है उस पर नंदी की प्रतिमा उकेरी गयी है। आपको पता ही है की नंदी को हिन्दू धर्म में पवित्र पशु कहा जाता है क्योंकि नंदी देवता को शिव का वाहन कहा जाता है।

पुराणों में कहा गया है की नंदी को कर्मठता तथा शक्ति-सम्पन्नता का प्रतीक कहा जाता है। सेंगोल का शैव नंदी की प्रतिमा ऐसा माना जाता है की यह शैव परम्परा से जुड़ा होगा।

सेंगोल पर नंदी होने का क्या अर्थ है ?

आपको बता दे नंदी को शक्ति-सम्पन्नता एवं समर्पण का प्रतीक हिन्दू और शैव परम्परा में माना जाता है। यह जो समर्पण होता है ऐसा माना जाता है राज्य के लिए राजा और प्रजा दोनों का लगाव होता है और इसे यह दर्शाता है।

कभी भी कहीं भी अपने शिवजी की प्रतिमा देखी होगी तो उनके सामने स्थिर मुद्रा में बैठे हुए नंदी जी होते है। हिन्दू मिथकों इस कहा जाता है कि शिवलिंग से ही ब्रह्माण्ड की उत्पति हुई है। किसी भी शासन के प्रति अटल होना नंदी की स्थिरता का प्रतीक माना जाता है।

सामान्य भाषा में सेंगोल को राजदंड कहते है। ये देखने में छड़ी जैसा है ऊपर से तो मोटा होगा और नीचे पतला होता है। इस पर जो नक्काशी होती है वो बहुत ही सुन्दर होती है। छड़ी के ऊपर आपको नंदी देवता की प्रतिमा देखने को मिलेगी। इसकी जो लम्बाई होती है वह करीबन 5 फ़ीट तक की होती है।

सत्ता हस्तांतरण सेंगोल का प्रतीक कहा जाता है। एक समय में जब अंग्रेज भारत से वापस जा रहे थे तो उन्होंने अपनी सारी सत्ता को जवाहरलाल में सौंप दिया था उन्होंने सत्ता सौपने के प्रतीक के रूप में सेंगोल को जवाहरलाल नेहरू को सौंप दिया था।

करीबन 5 हजार साल पुराना सेंगोल का इतिहास माना जाता है। सेंगोल का जो प्रसंग है वह महाभारत तथा रामायण जैसे ग्रंथों में कहा जाता है।

पहले जब राजा का राज्याभिषेक होता था तो उसके बाद राजा को राजमुकुट पहनाया जाता था।

राज्याभिषेक होने के बाद राजा को जो धातु की छड़ी दी जाती थी उसे राजदंड कहते है अर्थात जिसे सेंगोल कहा जाता है।

नृत्यांगना पद्मा सुब्रमण्यम की भूमिका

पद्मा सुब्रमण्यम भरतनाट्यम की प्रसिद्ध नृत्यांगना हैं. 1943 में जन्मीं नृत्यांगना के पिता कृष्णस्वामी सुब्रह्मण्यम प्रसिद्ध फिल्म निर्माता थे और मां मीनाक्षी सुब्रह्मण्यम संगीतकार थीं. पद्मा ने संगीतमें ग्रेजुएशन की डिग्री हासिल की और भारतीय नृत्य में में पीएचडीकी . उन्होंने कई रिसर्च पेपर और किताबें भी लिखीं हैं. वे अब तक 100 से ज्यादा अवॉर्ड्स से सम्मानित हो चुकी हैं. 1983 में पद्मा सुब्रमण्यम को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया था. इसके अलावा वे भारत सरकार की ओर से पद्मश्री और पद्मभूषण जैसे पुरस्कार भी प्राप्त कर चुकी हैं.

संगोल का सबसे पहला प्रयोग मौर्य साम्राज्य में 322-185 BC में सम्राट की शक्ति के तौर पर किया गया था. इसके बाद यही परंपरा गुप्त साम्राज्य (320-550 ई), फिर चोल साम्राज्य (907-1310 ई) और फिर विजयनगर साम्राज्य (1336-1946) में हुआ. मुगल और ब्रिटिश भी अपनी सत्ता और साम्राज्य की सम्प्रभुता के लिए सेंगोल का प्रयोग करते थे.

1947 में सेंगोल राजदंड प्राप्त करने के बाद नेहरू ने इसे दिल्ली में अपने आवास पर कुछ समय के लिए रखा। इसके बाद उन्होंने इसे इलाहाबाद (अब प्रयागराज) में अपने पैतृक घर आनंद भवन संग्रहालय को दान कर दिया। वहां, सेंगोल सात दशकों से अधिक समय तक रहा। जब 2021-22 में सेंट्रल विस्टा पुनर्विकास

परियोजना चल रही थी, तब सरकार ने इस ऐतिहासिक घटना को पुनर्जीवित करने और नए संसद भवन में सेंगोल राजदंड स्थापित करने का निर्णय लिया। नए संसद भवन में सेंगोल की स्थापना की गयी।
सेंगोल को चेन्नई के ज्वैलर्स वुम्मिदी बंगारू चेट्टी ने तैयार किया था और इसे तीन पुजारियों ने जवाहरलाल नेहरू को सौंप दिया था।नवनिर्मित संसद भवन में सेंगोल को स्पीकर की सीट के बगल में स्थापित किया गया है।नए संसद भवन में सेंगोल की स्थापना भारत की हजारों साल पुरानी परंपरा को पुनर्जीवित कर दिया है।

केवल विरोध के लिए विरोध नहीं

मैं किसी भी राजनैतिक पार्टी का चूंकि चवन्निया सदस्य नहीं हूं इसलिए मैं गांधी नेहरु इंदिरा अटल बिहारी व नरेन्द्र मोदी का केवल विरोध के लिए एक तरफा विरोध या समर्थन कभी नहीं कर सकता। लेकिन भारतीय संविधान संसदीय प्रणाली में किसी भी बहुमत की सरकार को पूरी तरह से नकारने को गलत मानता हूं। विपक्ष आज जिस तरह से लोकतांत्रिक शक्तियों के साथ खिलवाड कर रहा है और संसदीय प्रणाली का उपहास उडा रहा है वह मैं गलत मानता हूं। जो भी हो लोकतंत्र के दायरे में हो। आज राहुल गांधी ने जिस तरह से अमरीका के व्हाइट हाउस में गुप्तचरीय नीति से वहां स्वच्छंद राजनीति और मिथ्याचरण को प्रश्रय दे दिया है उससे देश की भविष्य में भारी क्षति हो सकती है। यह बैठक वहां के शक्तिसंपन्न राजनेता से हुई जिसका इमरान खान के तख्ता पलट में अहम भूमिका रही है। यह किस तरह का संकेत है? और कहीं इससे राष्ट्रविरोधी शक्तियों को खुलकर खेलने का मौका तो नहीं मिल रहा है ? इधर कोई कुछ भी कहे
इस सबको देखते हुए हमें भारतीय संसदीय परंपरा उसके संवैधानिक आधारों मूल्यों व मर्यादाओं की चिंता जरूर करनी चाहिए ! इसकी पालना करते हुए बहुमत प्राप्त भाजपा सरकार व उसके कार्यक्रमों व नीतियों के बारे में जनसुधारों व लोकहित की दिशा में अनुशासनिक होकर ही आगे बढना गलत नहीं लगता।
कभी प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगाकर सारे देश को एक कारावास में बदल दिया था। वह तानाशाही थी। लेकिन इसे अनुशासन पर्व साबित करने के लिए विनोबा के पवनार आश्रम में देश के कुलपतियों व बुद्धिजीवियों का सम्मेलन हुआ था।लेकिन आज स्थिति वैसी नहीं है। देश लोकतांत्रिक मर्यादा के साथ पूरे विश्व में सम्मान से देखा जा रहा है। हमें राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा करते हुए लोकतंत्र को जननोन्मुखी बनाना चाहिए। यही नये संसदीय भवन व सेंगोल के राजदण्ड का एक सांकेतिक सम्मान होगा। यह हमारे लोकतंत्र के प्रभावी अवतरण का दिशासूचक बनेगा। हमारी सदियों पुरानी आस्थाओं व जीवन मूल्यों की आधारशिला बनेगा हमारा नया संसदीय भवन। यह सेंगोल इसकी आत्मा। संसदीय भवन, तिरंगा, अशोक चक्र व सेंगोल हमारे जन गण का मूल्यवान धरोहर है। हमें सदैव इसका सम्मान करना चाहिए।

सलाम लोकतंत्र– 3

बदलते लोक तंत्र की बुनियाद : नया संसद भवन

परिवर्तनशील भारत की नवीन आधुनिक संसद

लोकसभा

राज्यसभा

पुरानी संसद की उम्र सौ वर्ष हो चुकी थी, सांसदों की संख्या १९७० की जनगणना के आधार ५४३ लोकसभा में , २४५ राज्यसभा में हैं, जिनमे परिवर्तन होना दीर्घ काल से विलम्बित है अतः नये संसद भवन की आवश्यकता रही है। साथ ही नवीनतम संचार, तकनीकी सुविधाओं की स्थापना, उपयोग और सुरक्षा संबंधी चुनौतियां भी , नवीन भवन की आवश्यकता की और संकेत करती रही है

पुरानी संसद		नई संसद
लागत	८३ लाख रूपये	८६२ करोड़ रूपये
समय	६ वर्ष	२. ५ वर्ष
आरम्भ और समापन	१९२१ , १९२७	जनवरी २०२ - अप्रैल २०२३
क्षेत्रफल	२४ हज़ार २८१ वर्ग मीटर	६५ हज़ार ५०० वर्ग मीटर
बैठक क्षमता	सदस्य (५५२ लोकसभा, राजयसभा)	१२७२ सदस्य (८८८ लोकसभा, ३८४ राजयसभा)
वास्तुकार	एडवर्ड लुटियनस , हरबर्ट बेकर	बिमल पटेल
प्रथम उपयोग	लेजिस्लेटिव काउन्सिल	संसद
स्वरुप परिकल्पना	सम्भवतय रोम का कोलोजिएम और चौसठ योगिनी मंदिर , मुरैना	मोर (लोकसभा) कमल (राजयसभा)
निर्माण		टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड

विशेषज्ञों के अनुसार निम्न आंकलन महत्वपूर्ण हैं :

पुराने संसद भवन में आवशयकता अनुसार समय समय पर अनेक अनौपचारिक निर्माण होते रहे, जो कारण भवन संरचना पर क्षमता से अधिक भार का कारण बने। साथ ही मूलभूत सुविधाएँ जैसे पानी , एयर कंडीशनिंग , सीसी टीवी कैमरों के लगाने पर , विभिन्न स्थानों पर सीलन के संरचन क्षीण होती रही है।

प्राचीन संचार उपकरणों और अग्नि शमन यंत्रो के कारण भी विकट सुरक्षा संबंधी परिस्थितियां की सम्भावना बनी रहती थी।

संरचनात्मक सुरक्षा

निर्माण के समय दिल्ली सिस्मिक जोन २ में हुआ करती थी , अब नवीन संसद भवन का निर्माण सिस्मिक जोन ४ के मानकों के अंतर्गत किया गया है।

उपरोक्त सिस्मिक परिवर्तन सुरक्षा दृष्टि अत्यधिक महत्वपूर्ण है, भविष्य में भवन और सांसदों , कर्मचारियों और आगंतुकों की सुरक्षा हेतु।

अपर्याप्त कार्यालय स्थान :

समय के साथ, बढ़ती आवशयताओ हेतु आंतरिक गलियारों को कार्यालयों रूपांतरण के कारण , अनेक त्रुटिपूर्ण निर्माण होते रहे हैं। इन उप विभाजनों के कारण सिमित स्थान और सिमित होते रहे , फलस्वरूप कर्मचारियों की उत्पादकता और सुरक्षा में क्षीणता निरंतर होती रही।

अधिक स्थान की आवशयकताएँ

१९२१ से १९२७ निर्मित काउन्सिल बिल्डिंग , अंग्रेजों ने अपने तात्कालिक उपयोग हेतु बहाई थी , किसी विशाल द्विसंसदीय प्रजातंत्र की आवशयक्ताओं के लिए नहीं। यह अग्रेजों द्वारा निर्मित काउन्सिल हॉउस अब हेरिटेज ग्रेड १ भवन है, जिसमें आधुनिक संसाधनो कमी लगातार अनुभव की गई थी।
५४३ सांसदों की संख्या १९७१ की जान गणना के आधार पर हो, जिसमे परिवर्तन दीर्घ काल से विभिन्न कारणों वश विलम्बित रहा है।

पुरानी और नवीन संसद संरचना

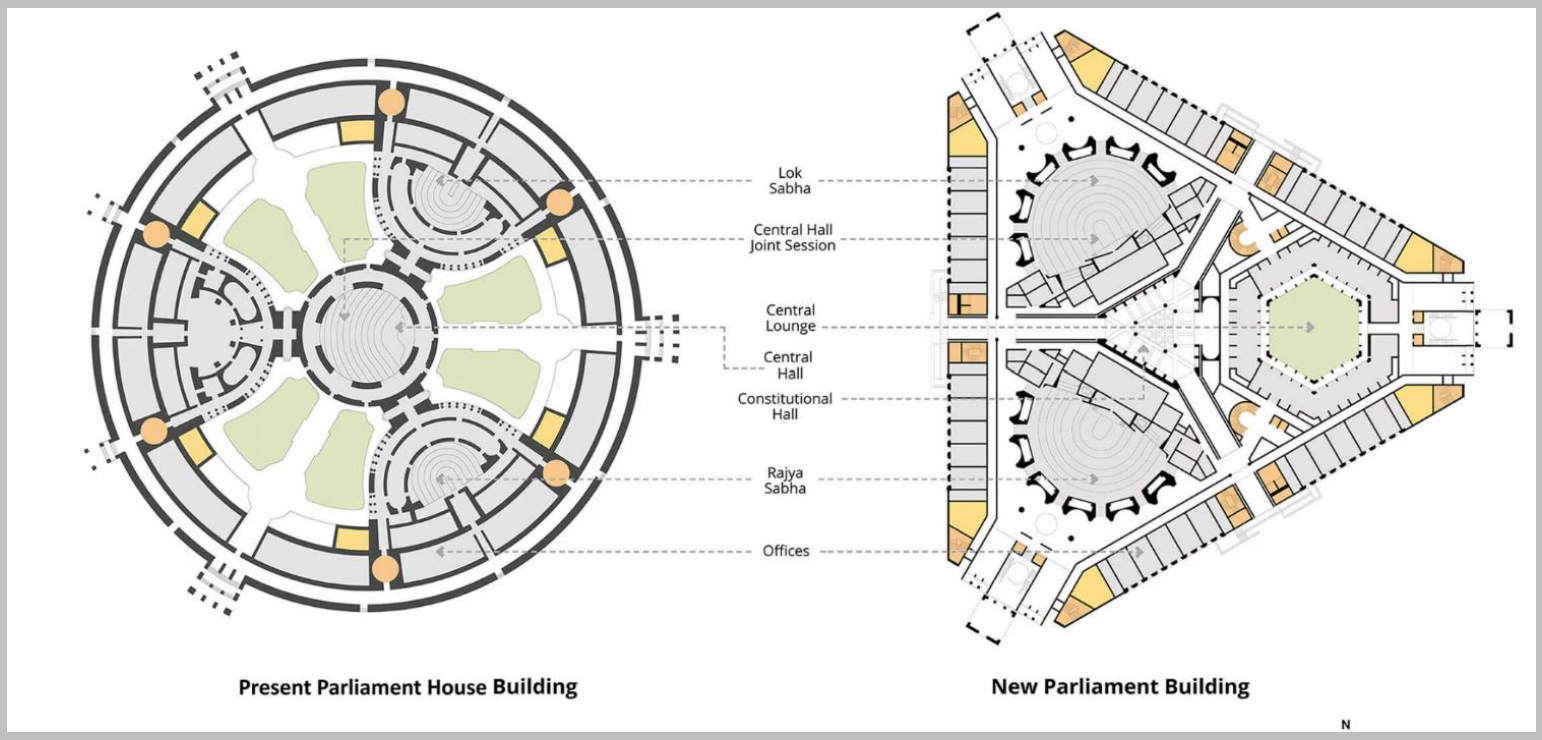

नवीन संसद भवन की विशेषताएं :

त्रिकोणीय आकार के कारण बेहतर समय और गति नियम से सम्बंधित उपयोग और उत्पादकता

स्थिरता के लिए प्रतिबद्धता : प्लेटिनम रेटेड हरित भवन

बेहतर उपयोग : त्रिकोणीय आकार के कारण बेहतर समय और गति नियम से सम्बंधित उपयोग और उत्पादकता

सांस्कृतिक एकीकरण : नवीन संसद भवन , क्षेत्रीय कला, शिल्प तथा सांस्कृतिक तत्वों को समाहित करते हुए प्राचीन और आधुनिक भारत जीवंतता , विवधता को निर्बाध रूप से संकलित करता है।

सुलभता के महत्व को समझते हुए दिवांग व्यक्तियों की सुगमता के अनुरूप व्यवस्था की गई है।

गैलरी और प्रदर्शनियां : विभिन्न क्षेत्रों के गीत, संगीत और नृत्यों

स्थापना गैलरी : देश की स्थापत्य विरासत तो दर्शनती है।

शिल्प गैलरी: विभिन्न राज्यों की विशिष्ट हस्तकला परम्पराओं का प्रदर्शन करतीं है।

उन्नत सुविधाएं और सुगम पहुँच का समुचित ध्यान रखा गया है।

आधुनिकतम डिजिटल वोटिंग प्रणाली एवं धवनि प्रसारण , रिकॉर्डिंग

भवन कागज़ रहित कार्यालय के अवधारणा को पूर्ण करता है।

माधव सिंह

कहानी – १

आजादी का स्वाद

पंद्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस।आधी रात का वक्त।देश आजाद हुआ था। जश्न के मूड में उस रात कोई नहीं सोया। आजादी कुछ लोगों के लिए मिठाई थी जो उन्हें थाली में परोस कर सौंपी गई थी और कुछ लोगों के लिए आजादी नयी पोशाक थी जिसे पहनकर उन्हें इतराने का मौका मिला था। कुछ लोगों के लिए आजादी फूल मालाएं थी जो उनके गले का हार बनने जा रही थीं। कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हें इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था।

इस गहमागहमी से दूर चार मित्रों की मंडली अपने तरीके से आजादी का जश्न मनाने निकली। गलियों से उठते शोर और सड़कों से गुजरते जुलूसों से दूर रहकर उन्होंने आजादी के पर्व को मस्ती के साथ मनाने की ठानी और झूमते लड़खड़ाते वे कमरे से बाहर निकल आए।हर आदमी उस रात अपने अलग अंदाज में जश्न मनाने को जैसे बेताब था।वे चारों हंसी ठिठोली करते हुए उस गली में आ पहुंचे जो शहर का रैड लाइट एरिया के अंतर्गत आती थी। वहां का माहौल आज जुदा था। वहां महिलाओं ने खूब श्रृंगार किया था और उनके घर रोशनियों से जगमगा रहे थे।बाहर बैठी वे हंसी मजाक में मशगूल थीं। कोई और दिन होता तो उन चारों के स्वागत में वे दौड़ पड़तीं पर आज वे अनजान बनीं अपनी मटरगश्ती में लगी रही।

'क्या इरादा है'उन चारों में से एक आगे बढ़कर पूछ बैठा। 'आज मार्केट बंद है,,, धंधा नहीं होगा। 'जवाब आया। 'वजह'? 'देश आजाद हुआ है 'उनका उत्तर था। 'तो'?एक जने ने पूछा।

'अब तक लोग हमारा स्वाद चखते थे, आज हम चखेंगे आजादी का स्वाद

उत्तर सुनकर चारों मित्र पहले तो कुछ नहीं समझे लेकिन बाद में उन्हें इस वाक्य का गूढ़ अर्थ समझ में आ गया। 'क्या दुगनी रेट पर भी नहीं?'एक ने जाते जाते पूछ लिया।

'दस गुनी रेट पर भी नहीं '।सब एकसाथ बोल पड़ीं। वे लौट आए।दूर कहीं बैंड पर राष्ट्रीय गान बज रहा था। सच में देश आजाद हुआ था।

अशोक आत्रेय

कहानी – २
वंदे मातरम

नेताजी का असली नाम क्या था यह तो किसी को भी पता नहीं, और ना इसके लिए किसी ने कभी कोशिश ही की। वह सब लोग उन्हें वंदे मातरम वाले नेता जी के नाम से जानते थे। इसी नाम से पुकारते थे, और वह भी अपने हस्ताक्षर तक इसी नाम से करने लगे थे। वह टेलीफोन उठाते तो बोलते वंदे मातरम। टेलीफोन रखते तो बोलते वंदे मातरम। किसी से मिलते तो हाथ जोड़ने से पहले बोलते वंदे मातरम। किसी को विदा करते तो मुड़ने से पहले बोलते वंदे मातरम। जिस राजनीतिक दल का उन्होंने गठन किया उसका भी नाम था वंदेमातरम दल। जिन संस्थाओं से वे जुड़ते, उनका भी नाम किसी ना किसी रूप में वंदे मातरम शब्द से जुड़ जाता था। यह संयोग था या सोची समझी चाल का परिणाम, मालूम नहीं, लेकिन उनका वंदे मातरम शब्द का इस तरह का बेधड़क इस्तेमाल, विरोधी दलों को रास नहीं आया। बहुत सोच विचार कर उन्होंने आखिरकार इस शब्द के प्रचुर इस्तेमाल पर रोक लगाने के लिए अदालत में केस ठोक दिया।

अदालत के लिए भी यह एक तरह से अनूठा मुकदमा था। शायद दिलचस्प भी। दोनों पक्षों ने अपनी ओर से भरपूर जिरह की। लेकिन कोई भी माननीय न्यायाधीश को संतुष्ट नहीं कर पाया। सीधे साधे तरीके से वंदे मातरम का नेता जी द्वारा इस्तेमाल, उनकी अपनी मर्जी, आजादी और सुविधा का मामला था, और इसमें किसी को एतराज का कोई हक नहीं बनता। दूसरी ओर से यह दलील दी गई कि नेता जी ने एक तरह से इस शब्द पर अपना एकाधिकार बना लिया है। वे इसके पर्यायवाची बन गए हैं। उनकी यह करतूत नागवार है, और इसके लिए उन्हें पाबंद किया जाना चाहिए। बहुत समझ सोच कर न्यायाधीश महोदय इस बात पर राजी हुए कि नेताजी को इस शब्द के इस्तेमाल के संबंध में कुछ हिदायतें जारी की जाए। मसलन नेता जी बहुत आवश्यक होने पर ही इस शब्द का प्रयोग करें। इसके इस्तेमाल से किसी भी प्रकार असम्मान मालूम नहीं

पड़ना चाहिए। इस शब्द के प्रयोग से विरोधी पक्ष को किसी प्रकार की हानि नहीं होनी चाहिए। आदि आदि। कुल मिलाकर यह सब वे बातें थीं, जिनका कोई अर्थ नहीं निकलता था, और ना ही इनका कोई महत्व ही था। कुछ भी था, लेकिन था तो अदालती आदेश ही ना। बस इतने से ही नेता जी का हाजमा खराब हो गया। उनका दिन का चैन और रात की नींद हराम हो गई। उनके दिल की धड़कनें तक अनियमित हो गई। नतीजन उन्हें अस्पताल में भर्ती करना पड़ा। पर यहां भी उन्हें चैन नसीब नहीं था। दो चार दिनों तक कुशल चिकित्सकों द्वारा की गई देखभाल से वह ठीक होने लगे, कि एक मुसीबत और खड़ी हो गई। जिस अस्पताल में भर्ती हुए थे, उनके द्वारा ही उद्घाटित थी, और उसका नाम था वंदेमातरम आयुर्वेदिक संस्थान। बस विपक्षियों को एक और मौका मिल गया।

वह जुट गए यह सिद्ध करने कि नेता जी जानबूझकर इस अस्पताल में भर्ती हुए हैं, ताकि वंदे मातरम का नाम अखबारों में आता रहे। उनके मेडिकल बुलेटिनों में आता रहे। उनकी पार्टी के अनुयायियों द्वारा यह नाम उछाला जाता रहे। विपक्षी, नेताजी की यह हरकत अदालत के आदेशों की अवहेलना सिद्ध करने में जुट गए। मामला फिर न्यायालय में जा पहुंचा। बहसों और जिरहों का दौर चालू हो गया। न्यायालय ने विवाद को खत्म करने के लिए यह आदेश जारी करने का फैसला किया कि नेताजी को इलाज के लिए अन्यत्र स्थानांतरित कर दिया जाए, पर अफसोस अदालत का यह निर्णय नेताजी तक पहुंचता, उससे पहले ही नेता जी दूसरे लोक के लिए अपना स्थानांतरण करवा चुके थे। जाते-जाते अपनी अंतिम इच्छा के रूप में यह लिख गए कि जिस घाट पर उनका अंतिम संस्कार किया जाए, उसका नाम वंदे मातरम घाट कर दिया जाए। मामला फिर कोर्ट के विचाराधीन हो गया।

सुभाष दीपक

यह तो है!

मैं अधूरी रचनाओं का लेखक हूं।

मुझे ऐसा बहुत से लोग कहते हैं

और मैं इसका बुरा भी नहीं मानता।

मैं बहुत कम पढता हूं लेकिन दिन-रात लिखता हूं।

.....अस्सी साल में मेरे दिमाग में बहुत भूसा भर गया। भाषा व भावना के नाम पर। इसके ऊपर सुबह से शाम तक जाने किन किन से टकराना होता है। टोने - टोटके करने पडते हैं। घर में ही मेरे अपने कमरे में किताबों के ढेर हैं। घर के हर कोने और कमरे से या आसपास से !

(आप चाहें तो इस शो में शामिल हो जाएं)जो भी बाहर आता है वह अपने आप में एक ग्लेडियेटर का अवतार होता है। या WWF का पहलवान। हमारी भाषा में कहें तो युयुत्सु या यवन। अन्य भाषाओं में सांप्रदायिक निंजा या सांस्कृतिक स्पार्टाकस। लेकिन आज के संदर्भ में तथाकथित अल्ट्रावाम या अंध राष्ट्रवादी - आधा -बुद्धिजीवी या पूरा पोस्ट ल्युटीयंस आदि आदि।

मेरे कमरे में आधी अधूरी रचनाओं के खूब सारे पैकेट्स हैं। अलमारियां भरी हैं। आधी अधूरी रचनाओं से। उनको पुलिंदे कहना ठीक नहीं होगा। मोबाइल का ट्रेफिक दिनरात चलता है। अब ए आई एक नयी खिडकी खुल गयी है। मैं जहां जिधर देखता हूं रचनाकारों की भीड नजर आती है। कयी पुरानों (पुराणों) के अहसान के नीचे दबा हूं। नयों की लाइनें लगी हैं। आप भी हो सकता है लाइन में हों। कहीं ना कहीं। कृपया इंतजार

कीजिए। जब ओखली में सिर दिया है तो मूसल से क्या डरना। फिर अब तो सोशल नैटवर्क किंग है। कभी सुनते थे - when comedy was the king . यह अभी भी है

सर्वोच्च न्यायालय की स्थिति देखलीजिए। एक से बढकर एक कोमेडी किंग है। और उसके नीचे की कोर्ट कचहरियों के लम्बित मुकदमे। करोडों की संख्या के पार हैं हम। है कोई माई का लाल कहने वाला जो कह सकता है- संविधान खतरे में है ? फैसलों व न्याय का इंतजार करने में तो हम हैडमास्टर हैं। हार जीत के फैसले का जिम्मेदार वकील को नहीं ठहराते भाग्य को दोष देते हैं। और इसके लिए अनंत काल तक इंतजार कर सकते हैं। पिछले जन्म से लेकर अगले जन्म की बात करके हम कोई सिरदर्द अपने ऊपर नहीं छोडते। इसका जिम्मा हम अपनी करनी को देते हैं। कहते भी हैं जैसी करनी वैसी भरनी। जो कुछ

जो नहीं कहते या करते - वे भी उसी 'गोदो'(भगवान) की प्रतीक्षा में हाथ पर हाथ बांधे खडे हैं जो नहीं आएगा। लेकिन फिर भी विश्वास के बलबूते पर कहते है- और राज करेगा खालसा ! तो लीजिए एक और आधी रचना। मुझे पता है इससे अधिक आप पचा नहीं पाएंगे। और मैं भी लिख नहीं पाऊंगा। वह गाडी वाला आगया। कचरा निकालना है। कहीं आपकी कोई मूल्यवान अधपढी किताब या मेरी ही आधी अधूरी रचना तो इसबार कचरे की भेंट नहीं चढ गयी ? सोचता है भारत !

इतनी सी बात
'मेरा एक दिल है
जिसमें रहता है
तू या कोई खुदा
एक अनजान
हकीकत कोई
एक उससे जुदा ।'

आप मानें या ना मानें यह कलाकृति मेरे किराने दुकान के एक मित्र के रेखांकन को फोटोग्राफ करने और उसके बाद की डिजीटल प्रक्रिया से निर्मित हुई है। इसकी रचना प्रक्रिया (हिसाब - किताब से निकली कला) रोचक रोमांचक व राहत देने वाली लगती है।

एक लडकी को देखा तो
ऐसा लगा !

मैं अपने बहुत सारे डिजीटल प्रयोगों में से एक महत्वपूर्ण प्रयोग मानता हूं। फिलहाल इतनी सी बात।

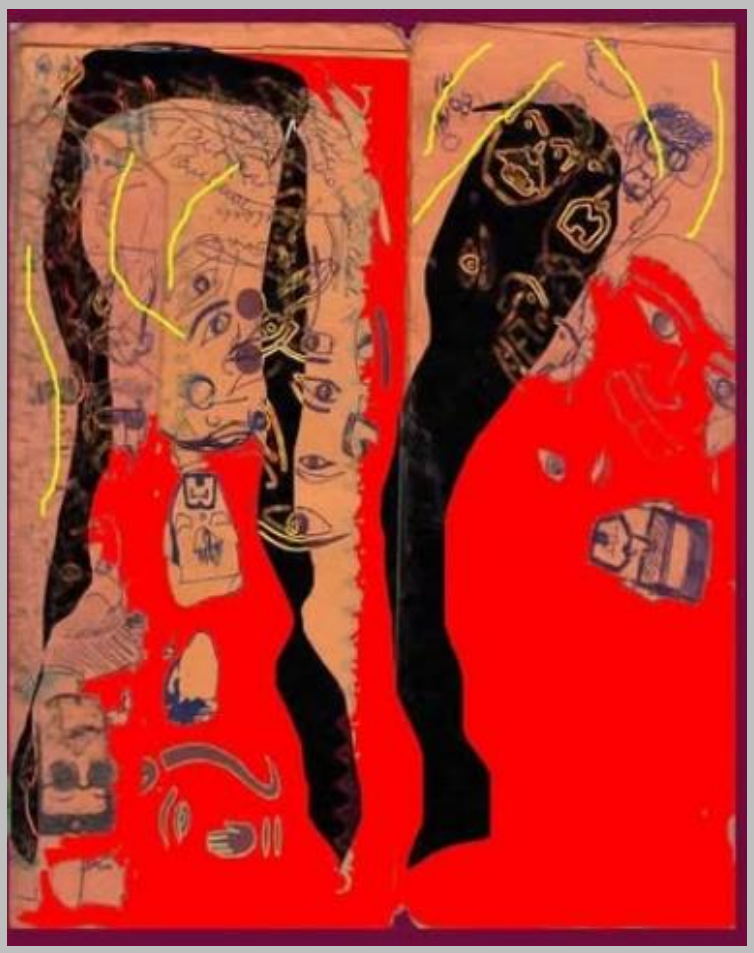

कविता 1

अब पकड़ में आई है
एक कविता
बड़े दिनों के बाद
आग और पानी से बनी
पसीने से तरबतर
बहुत दिनों से सोया पड़ा था मैं
बेखबर गुलाब की पंखुड़ियों में
और इसीलिए
शायद दूर चली गई थी कविता
अबोध बचपन की तरह
दूर बहुत दूर
अब पकड़ में आई है.....

साइबर कैफे में 3

साइबर कैफे में
चैट कर रहा है ओरांग उटांग
बाक्स की खिड़की तोड़कर
अभी अभी बाहर निकली है।
कोई न्यूड मेनका
और इस सक्रांति काल में
एक साथ आसमान में
उड़ रही हैं पतंगें रगं बिरंगी
कविता के शब्द उलझ रहे हैं
एक दूसरे में
वेटिंग फार द गोदो के थियेटर में
कर रही है रंभा प्रतीक्षा
अपने किसी नए प्रेमी का
हर बार की बरसात की तरह
कही कुछ भी नजर नहीं आता बदलाव
किन्तु सोचते तो हम यही हैं ....
कि अच्छे दिन आने वाले है!

बचपन 2

रेगिस्तानी शुष्क हवा
चुमती हुई सुई की तरह
ले गई दूर
ढूंढता रहा है मैं
मां का प्यार
स्वेटर की बुनाई में
ठण्ड की भूलभुलैया में
अभी तक
कर रहा हूं चहल कदमी
शब्दों की गर्मजोशी के साथ
उतरना चाहता हूं मैं
कविता के खुले आंगन में

समुद्र की लहरों के बीच 4

उन्मुक्त हंसी
पौरुष की हवाओं सा प्यार
जब पुकारते हें पहाड़
आओ हम साथ साथ चलें
पहाड़ों और सागरों के साथ
यहीं तो है मिलन हमारा
पूरे समर्पण के साथ
जहां चूम रही होगी
हमारे विजय की कामना
हमारा भविष्य

चिड़िया (एक चीनी कविता की स्मृति में) 5

मैं नहीं बदलूगी अपना घोंसला
हीरे मोतियों से बने स्वर्ण महलों में
मैं नहीं बदलूंगी अपना जंगल और आकाश
स्वर्ण जंजीरों के लिए

युद्धरत दुनिया में 6

युद्धरत है सारी दुनियां
बचे है फिर भी कुछ बच्चे
और खाली कुर्सियां
और एक अश्वत्व वृक्ष
जाने कब से खड़ा है निष्क्रिय
आकाश की ओर जाती जड़े जिसकी
अभी भी कुछ ढूंढ रही है—
शायद नए माहेश्वर सूत्र
डमरू से निकल रहे हैं नए गणतंत्र
किन्तु शहर जंगल और आसमान में
बढ़ता जा रहा है शोर
बुन रहा है कोई अदृश्य उन्मादे
तंग गलियों में घुसने को मजबूर है
ब्रह्मा, विष्णु और महेश
कागज कलम रंग और स्वर
महर्षि पाणिनी के दिल दिमाग की नसों में
पैदा कर रहे हैं झनझनाहट
आणुविक फोड़े के कंप्रेस होने की
शायद फिर भी बचेंगे हम
इसी आशा और विश्वास के साथ
कि बचे रहेंगे हमारे बीच शब्द
युद्धरत इस सारी दुनियां में .....

बिल्ली 7

वह बिल्ली ही लाई थी
मेर लिए
नई नौकरी का नियुक्ति पत्र
मैं किस रास्ते से
पहुंचता दफ्तर ?

शीर्षकहीन कविता 8

एक दिन जब मैं
सुई में पिरो रहा था धागा
निकल गया पूरा का पूरा
सुई के छेद से
किन्तु जाने कैसे अटक गया नाखून
और मैं लहूलुहान होकर मर गया

शीर्षकहीन कविता 9

जब चप्पल बन जाएगी सड़क
और सड़क बन जाएगी चप्पल
तभी नष्ट होगी यह दुनिया

ड्रीम गर्ल 10

उदासी के समय छींक दिया वह
बेड़ा गक्र हो गया

चूहा बन गया हाथी 11

हाथी मेरा साथी
सफेद कपड़े पहने
माथे पर टोपी
टोपी के नीचे सेफ में
पड़ी एक माला
राम राम जपना
पराया माल अपना
मोटे फ्रेम के चश्मे के बीच
लटकती चमड़ी की जिल्द में बंद
अनुभवों के कई पुलिन्दे
कई रेपकेस
कई ब्रीफकेस
कई बंद कई खून खराबे डकैती
के सैकड़ों मामले
कई कई बार
कितनी बार किया टेलीफोन
जितना जहां से जितना चाहा मिल गया
मौसेरे भाइयों से रिश्ता पुराना
फाइल में रोज का
लेखा जोखा
लाभ हानि जीवन मरण तो
सभी लेगे रहते हैं
कितने दिन की जिन्दगी है
कुछ करता चल
नाम रोशन
दुनिया में
गिनीज बुक्स में होक एक दिन
नाम दर्ज मेरे दोस्तका
जो बन गया चूहे से हाथी
हाथी मेरा साथी
वोट फॉर एलीफेंट

सांप 12

अचार मुरब्बों की जगह
अब टेडपोल सांप
गै मांस के लोथड़े
कुछ बीच बीच में
गले में अटक जाने वाले
पिन फाइलों के
मंदि मस्जिद विवाद
कहां मर गई सरकार ?
न निगलते बनता हे
न ही उगलते
और ऊपर से इतनी तेज
भूख लगी है
बाबुओं की यह जिंदगी है
जो कुछ मिल रहा है
उसी को खाओ
जल्दी से निपटानी
आज भी कुछ फाइलें
राष्ट्र की प्रगति करनी है
विदेशी मुद्रा की जरूरत जो है....!

शीर्षकहीन कविता 13

दुनिया में जब बच जाएगा केवल
काला रंग
तब मैं उसे तुम्हारे चेहरे पर पोल दूंगा
और हो जाएगा तुम्हारा अस्तित्व समाप्त
हे ईश्वर !

समसामयिक ई–पत्रिका

अकस्मात

संपादक: अशोक आत्रेय

सहयोग: सुभाष दीपक

ग्राफ़िक्स: गिर्राज जाँगिड़

प्रबंधक: लोमष ऋषि

सम्पर्क सूत्र: संपादकीय - भू-ऋषि, डी 38-39, देव नगर, टोक रोड़, जयपुर –302018

दूरभाष व व्हाट एप्स: +91 88248 88775

सम्पर्क सूत्र: प्रबंधकीय - बी-3, राधा निकुजं बी, गणेश नगर, ईस्कान मंदिर रोड़,

मानसरोवर, जयपुर - 302 018

दूरभाष व व्हाट एप्स: +91-88248 88775

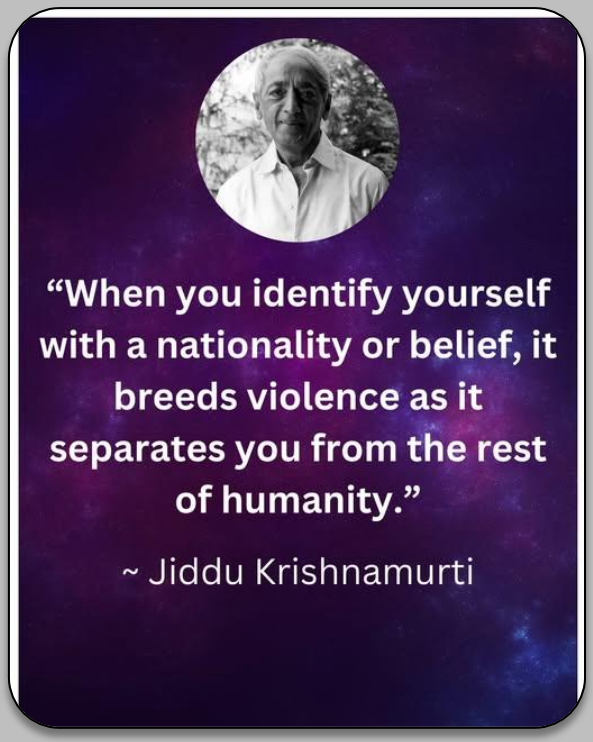

All INDIANS must read Ramayana, Mahabharat, Upanishad and Gita To understand India... without that No Indian can claim he is an Indian in true sense. I am not talking of Purans etc.. Presently this is a must even for people of other faiths too these classics are very important. If they are true to their nation. These epics have History, geography, religion, education... code of conduct. Literature art culture.. and religion etc.. which gives perfect idea about India.Most of our literature and culture is an extension of these known epics..